IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

दलित साहित्य का वैचारिक आधार

डॉ0 उपेन्द्र सिंह
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी)
शासकीय विवेकानंद महाविद्यालय मैहर,
जिला मैहर (म0प्र0)

सारांश : आज के इस आधुनिक युग में हिन्दी साहित्य में दलित साहित्य भी अपना एक विशेष स्थान बना चुका है। दलितों के लिए लिखा गया या फिर दलितों के द्वारा लिखा गया साहित्य तो पुरातन काल से ही प्राप्त होता आया है। लेकिन दलित साहित्य की शुरूआत सर्वप्रथम 1960–65 के आस–पास मराठी साहित्य से हुई थी। धीरे–धीरे दलित साहित्य का वर्चस्व सम्पूर्ण साहित्य जगत में छा गया। दलित साहित्य ने समाज की रूढ़िवादी मान्यताओं, धार्मिक आडम्बर, ईर्ष्या–द्वेष, छल–कपट, ऊँच–नीच, शोषण की कलई उतार कर उसका सही स्वरूप बाहर लाने का प्रयास किया गया है।

अभी तक जिस तबके को हेय दृष्टि से देखा जा रहा था, यह उन्हीं के लिए उन्हीं के द्वारा रचा गया साहित्य है। इसमें अहसास, अनुभवों का खरापन भी है। स्वयं की भोगी हुई पीड़ा, उत्पीड़न, शोषण एवं जो आग वो अपने हृदय में सदियों से दबाए चले आ रे थे, उसी को सबके सम्मुख लाने का प्रयास किया है। शायद इसी वजह से हर बार यह सवाल यक्ष प्रश्न की भाँति खड़ा हो जाता है, कि दलित साहित्य किसे कहते हैं ? इस सवाल का जबाब इस लोकोक्ति से भी दिया जा सकता है– **''जाके पाँव न फटे बिबाई, सो क्या जाने पीर पराई''**। जिसने कभी दो दिन पुरानी रोटी न खाई हो, दो दिन तक एक टुकड़े के लिए तरसा हो, वह उस भूख को कैसे समझ कर लिख सकता है। उस एहसास को यदि उसने जान भी लिए तो उसमें आखिरकार कितनी सच्चाई होगी ? यह तो बिलकुल ही नहीं मालूम है।

आज के इस आधुनिक युग में भी यदि दलित साहित्य के वैचारिक आधार की बात की जाए तो वह बाबा अम्बेडकर की वैचारिकी पर ही टिका है। क्योंकि दलित समाज के लिए जो कार्य बाबा साहब ने किया है, वह अन्य किसी ने नहीं किया है। उन्होंने दलितों के अभिशप्त जीवन को मुखर करने का अथक प्रयास किया है। बाबा साहब के द्वारा निर्मित सिद्धान्त, उनके स्वर एवं उनके द्वारा किया गया उत्सर्ग, उनका वैचारिक चिन्तन

आज भी दलित समाज के लिए अचूक हथियार का दायित्व निभा रहा है। अम्बेडकर जी ने हमेशा दलितों के उत्थान के लिए अथक परिश्रम किया है। यह बाबा साहब के प्रयत्नों का ही परिणाम है कि पूर्णरूपेण न सही पर कुछ हद तक दलित समाज की मुख्य धारा से जुड़ चुके हैं।

"हिन्दी दलित साहित्य के सभी रचनाकार इस बिन्दु पर एक मत है कि महात्मा ज्योतिबा फुले स्वयं सक्रिय रूप से क्रियाशील रहकर ब्राह्मणवादी सामन्ती मूल्यों का डटकर विरोध किया। सामन्ती मूल्यों के विरूद्ध उन्होंने आंदोलन खड़ा किया। इसी कारण दलित समाज साहित्य जहाँ एक तरफ डॉ0 अम्बेडकर को शक्ति पुंज के रूप में स्वीकृति प्रदान किया, तो वहीं दूसरी तरफ महात्मा ज्यातिबा फुले को दलित रचनाकारों ने श्रेष्ठ विचारक के रूप में अलंकृत किया। वास्तव में डॉ0 अम्बेडकर और महात्मा ज्योतिबा फुले के विचारों की प्रखर शक्ति पाकर दलित साहित्य आन्दोलन प्रगति की ओर निरन्तर बढ़ रहा है।"[1]

हमारे समाज में हिन्दी साहित्य के बारे में एक धारणा दुष्प्रचारित है कि दलित साहित्य का उद्‌गम मराठी साहित्य के द्वारा हुआ है, परन्तु यह गलत है, क्योंकि हिन्दी साहित्य में दलित साहित्य की उत्पत्ति तो सिद्धों एवं नातों के युग में ही हो चुकी थी। जब हिन्दी साहित्य में दलितों का युग चल रहा था तो करीब 30–40 ऐसे सिद्ध एवं नाथ कवि थे जो कि दलित थे, एवं उन्होंने लगातार ब्राह्मत्व एवं समाज में व्याप्त जातिगत व्यवस्था के खिलाफ बिगुल बजाया। हिन्दी साहित्य के स्वर्णिम युग में ही रैदास एवं कवि जैसे सन्तों ने जातीय–व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह किया है, तथा समाज में जागरूकता लाने का भी प्रयास किया है।

"रैदास एक ही बूँद सौं सब ही भयौ वित्थार,
मूरिख है जो करत है, वरन् अवरन् विचार।"[2]

"जो तू बाभन बभनी जाया,
आन बाट हवैं क्यों नहीं आया।"[3]

इन कुछ पंक्तियों के द्वारा हम यह देख सकते हैं कि संत कबीर एवं रैदास की रचनाओं के माध्यम से ही कहीं न कहीं ज्योतिबा फुले, बाबा साहब जैसी महान विभूतियों ने भी प्रेरणा लेकर उस चिंगारी को एक ज्वाला के रूप में प्रज्जवलित किया है। 'जो आज की वर्तमान दलित साहित्य की वैचारिक अवधारणा इस भ्रान्ति पर है कि दलित साहित्य का उद्‌गम मराठी साहित्य से हुआ है उसका पटाक्षेप हो जाता है, क्योंकि हिन्दी 'साहित्य में दलित साहित्य का उद्‌गम तो सदियों पहले ही हो चुका था।

"विश्व के अनेक देशों में ऐसे वर्ण हैं जैसे रोम में स्लेव या दास कहलाते थे। स्पार्टर्न में इनका नाम हेलोटस या क्रीत था। ब्रिटेन में ये विलियन्स या क्षुद्र कहलाते हैं, अमेरिका में नीग्रो, जर्मनी में यहूदी थे। भारत में ये दलित कहलाते हैं। लेकिन जितना बदनसीब दलित भारत में है, उतना अन्य कोई नहीं है। आज तो दास, क्षुद्र, क्रीत सब विलुप्ति की कगार पर हैं, परन्तु भारत में अश्पृश्यता का यह अजगर आज भी मुँह फाड़े है।"[4]

बाबा साहब की यात्रा 1920 से 1956 तक एक मूकनायक से लेकर महानिर्वाण तक हुई जिसमें उन्होंने अपनी लेखनी, कार्य–पद्धति, एवं मुखरता से दलितों के लिए अथक परिश्रम किया। डॉ0 अम्बेडकर की मेहनत का ही परिणाम था कि दलित गाँव की अछूत बस्ती से निकलकर अब गोलमेज परिषद् तक पहुँच चुके थे। बाबा साहब ने दलितों के लिए जल से लेकर भगवान तक विद्रोह किया। बाबा साहब ने हमेशा दलितों में चैतन्य लाने का प्रयास किया। तो फिर बाबा साहब के इस अभियान से दलित साहित्यकार कैसे अछूते रहते।

"दलित लेखकों ने बाबा साहब की सोच और उनके कार्य का गौरवगान प्रारंभ कर दिया। दलित कवियों ने अपनी कविताओं के द्वारा समाज में दलित आन्दोलन को निर्मित किया। बाबा साहब के इस कार्यकाल को दलित आन्दोलन के इतिहास में प्रबोधन पर्व कहा जाएगा। इस प्रवोधन के पर्व में प्रमुख लेखक के रूप में बंधुमाधव, शंकरराव खरात एवं अण्ण भाऊ साठे का उल्लेख किया जा सकता है।"[5]

डॉ0 अम्बेडकर की विचारधारा दलितों के जीवन में एक नया उत्साह एवं प्रेरणा का काम कर रही थी। तो दूसरी तरफ अन्य वर्गों के लिए मार्क्सवादी विचारधारा उत्साह का काम कर रही थी। परन्तु कुछ फासीवादी प्रतिक्रियावादी जो कि दलित वर्ग के उत्पीड़न में कोई कमी नहीं रखते थे, उन्हें ये बदलाव रास नहीं आ रहा था। फासीवादी विचारधारा को न तो डॉ0 अम्बेडकर की विचारधारा पसन्द थी और न ही मार्क्सवादी विचारधारा। डॉ0 अम्बेडकर की विचारधारा में पुराणों में लिखी बातों को मिथ्या मानते थे, तो मार्क्सवादी विचारधारा फासीवाद को गुनहगार समझती थी। इस पर दक्षिण के एक प्रसिद्ध चिन्तक नागराज ने मार्क्सवादी एवं अम्बेडकरीय विचारधारा दोनों का गहन अध्ययन किया और कहा कि,

"पूँजीवाद की आर्थिक और राजनैतिक संरचना की व्याख्या तो पश्चिम के समाज विज्ञान ने की, पर उसके जातीय और सांस्कृतिक आधार की विवेचना करना तीसरी दुनिया के दलित बहुजन बुद्धजीवियों का कर्तव्य है।"[6]

हालांकि दलित विचारधारा का दायरा केवत दलित समाज तक ही नहीं था, वरन् बहुत व्यापक था, इसमें बुद्ध की करूणा थी, तो ज्योतिबा फुले की बहुजन समाज की विचारधारा, नारी स्वतंत्रता तथा उनके आदर का प्रश्न, वैश्विक एवं आर्थिक विचारधारा से सम्बन्धित सवाल इसमें सम्मिलित हैं। दलित समाज के बहुत सारे महान चिन्तकों, अर्थशास्त्रियों, और राजनेताओं ने अम्बेडकर की विचारधारा को प्रसारित करके उसे प्रासंगिक सिद्ध किया है।

डॉ0 अम्बेडकर स्वयं भी एक दलित थे उन्हें दलितों की तकलीफ समझ में आती थी, इसी कारण से उन्होंने पुराणों में लिखी हुई, एवं समाज में व्याप्त कुरीतियों का सदा विरोध किया, एवं समाज को भी इस आंदोलन के लिए प्रेरित किया। डॉ0 अम्बेडकर को तो सम्पूर्ण हिन्दू वर्ण–व्यवस्था से ही घृणा थी, और इसी घृणा से अम्बेडकरीय वैचारिकी का जन्म हुआ। डॉ0 अम्बेडकर अपने युगीन के सर्वाधिक शिक्षित व्यक्ति थे।

डॉ0 अम्बेडकर ने अपनी तरह से प्रत्येक स्तर पर दलितों की व्यथा को देखा है, स्वयं भी अछूत होने की कसक झेली है। उन्होंने स्वयं की विचारधारा एवं महात्मा बुद्ध के उपदेशों से प्रेरणा लेकर हमेशा दलितों के उत्थान एवं भलाई की बात की है। दलित समाज आज के आधुनिक युग में लगातार प्रगति के आयामों को छू रहा है, कि अब भारत के सर्वोच्च पद पर भी पदासीन हो चुके हैं। इसके लिए डॉ0 अम्बेडकर ने बहुत संघर्ष किया है, यहाँ तक कि उन्होंने स्वयं कहा था कि,

"जिस दिन भारत में राष्ट्रपति के पद पर किसी आदिवासी महिला पदासीन हो जाएगी वह दिन स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा, जो कि (द्रोपदी मुर्मु) के रूप में हो चुका है।"

कहने का अर्थ यह है कि यदि डॉ0 अम्बेडकर ने दलितों की जागरूकता के लिए इतने प्रयत्न न किए होते तो दलित आज भी उसी परिवेश में जी रहे होते जो कि कबीर एवं रैदास के काल में थी। देखा जाए तो सन्तों, सिद्धों एवं नाथों ने जिस रेखा को खींचा था, अम्बेडकर ने उसी रेखा को बहुत बड़ा कर दिया है, जिसमें आज हमारे देश के करोड़ों, दलित खुली हवा में साँस ले रहे है, उन्हें वह सारे अधिकार प्राप्त हैं, जो उच्च वर्ग के लोगों को मिले हुए हैं।

संदर्भ–सूची

1. 'दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र', ओम प्रकाश वाल्मीकि, पृष्ठ 38
2. 'दलित चिन्तन अनुभव एवं विचार', डॉ0 एन0 सिंह, पृष्ठ 96
3. 'कबीर ग्रन्थावली', श्यामसुन्दर दास, पृष्ठ 198
4. 'दलित हिन्दी कविता का वैचारिक पक्ष', डॉ0 श्याम बाबू शर्मा, पृष्ठ 54
5. 'दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र', डॉ0 शरण कुमार लिम्बाले, पृष्ठ 38
6. 'सत्ता संस्कृति और दलित सौंदर्य शास्त्र', सूरज बड़त्या, पृष्ठ 187